International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)

E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

संत रज्जब जी और संत सुन्दरदास की वाणियों में सामाजिक चेतना

डॉ॰ कृष्णा मीणा

सहायक आचार्य, गार्गी कॉलेज (दिल्ली विश्वविद्यालय), नई दिल्ली, भारत

शोध सारांश

व्यक्ति की समाज के प्रति जागरूक मानसिकता ही सामाजिक चेतना कहलाती है। निर्गुण संत कवियों ने अपनी वाणियों के माध्यम से सामाजिक चेतना को जागृत करने की साधना की। संत रज्जब अली और संत सुन्दर दास जी का काव्य तत्कालीन युग परिस्थितियों से प्रभावित नजर आता है। संत रज्जब अली और संत सुन्दर दास जी ने अपने अपनी वाणियों के माध्यम से मध्यकालीन सामाजिक चेतना को सशक्त किया जिससे सामाजिक स्तर पर जन-जीवन का उद्धार हुआ। जहाँ तक संत रज्जब जी और संत सुन्दरदास जी की सामाजिक चेतना की तुलना का प्रश्न है, संत रज्जब अली सामाजिक चेतना के आधारों में अधिक उग्र और आक्रमक नजर आए जबकि संत सुन्दरदास शास्त्रीय सम्मत होते हुए भी कम ऊर्जावान नजर आए। अपने सामाजिक आदर्शों को फली भूत करने के लिए जो ज्योति दोनों संतों ने जलाई, वह युगों तक हिन्दी साहित्य को अक्षुण्ण रखेगी।

संकेताक्षर: संत रज्जब अली, संत सुन्दरदास, सामाजिक चेतना, वर्ण-व्यवस्था, नारी-निन्दा ।

मानक हिन्दी कोश में चेतना को आन्तरिक अनुभूतियों और बाह्य घटनाओं का बोध कराने वाली वृति कहा है।(1) जब व्यक्ति अपनी चेतना को समाज के साथ जोड़कर उसे व्यापक रूप प्रदान करता है, तब व्यक्ति की चेतना सामाजिक चेतना में परिणत हो जाती है। व्यक्ति की समाज के प्रति जागरूक मानसिकता ही सामाजिक चेतना कहलाती है। निर्गुण संत काव्य धारा ने मध्यकाल में एक आदर्श समाज के स्वरूप को प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया। निर्गुण संत कवियों ने अपनी वाणियों के माध्यम से ईश्वर-भक्ति का आश्रय लेकर जन मानस को जागृत करने की साधना की।(2) इन संतों की सामाजिक चेतना तत्कालीन युग परिस्थितियों से प्रभावित नजर आती है।

निगुर्ण संत काव्य धारा के अन्तर्गत दादू सम्प्रदाय में संत दादू दयाल के दो शिष्यों का नाम बडे ही आदर से लिया जाता है- संत रज्जब जी और संत सुन्दरदास। संत सुन्दरदास ने अपने बड़े गुरु भाई रज्जब जी से बहुत कुछ सीखा जिसका प्रभाव उनकी रचनाओं में बखुबी मिलता है। रज्जब जी ने भी सुन्दरदास जी के शास्त्रीय ज्ञान से अवश्य लाभ प्राप्त किया होगा।(3) दोनों की रचनाओं की तुलना से पता चलता है कि कुछ काव्य-रूपों की रचना समान रूप से हुई है, किन्तु जहाँ

संत रज्जब अली ने अपनी वाणी में आध्यात्मिक विचारों को काव्य रूप में पिरोया है, तो दूसरी ओर संत सुन्दर दास ने अपनी अभिव्यक्ति को दार्शनिक रूप दिया है। उदाहरणस्वरूप-

रज्जबः 'तन मन सक्ति समन्द गति, निर्मल नाँव जहाज।

बाद बान बुध थंभ चढ़ि, गुरू सारे सब काज।।'

सुन्दरदासः

'सुन्दर समुझे एक है, अनसमझे को इति।

उभय रहित सतगुरू कहै, सो है वचनातीति।।'

अन्य भक्त कवियों की भांति संत रज्जब जी और संत सुन्दरदास की सामाजिक चेतना उनकी रचनाओं में परिलक्षित होती है, जिसका तुलनात्मक अध्ययन होना अपेक्षित है। सुविधा के लिए हम इन संतों की सामाजिक चेतना को कुछ आधारों में विभक्त कर सकते हैं-1. वर्ण-व्यवस्था; 2. सामाजिक समानता; 3. धार्मिक आडम्बरों तथा अंध-विश्वासों की भर्त्सना; 4. नारी-निन्दा; 5. मानवीय मूल्यों का महत्व।

मध्यकालीन संत-युगीन समाज आज के समाज से ज्यादा भिन्न नहीं था। वर्ण-व्यवस्था से उपजी सामाजिक विकृतियाँ उस समय चरम सीमा पर थी। संत सुन्दरदास ऐसे एकमात्र निर्गुण संत थे जो शिक्षित थे, जिन्होंने सभी शास्त्रों का ज्ञान काशी में प्राप्त किया। परिणाम स्वरूप वर्ण-व्यवस्था पर उनके विचार अन्य निर्गुण संतों से अलग नजर आए। उन्होंने वर्ण-व्यवस्था की संरचना को शास्त्रीय ढंग से परिभाषित करते हुए समर्थन किया।(5)

सुन्दरदासः

'देह ई कौं आपु मानि देह ई सौ होइ रह्यौ, जड़ता अज्ञान तम शुद्र सोई जांनिये।

इन्द्रिनि के व्यापारनि अत्यन्त निपून बुद्धि, तमो रज दुहुं करि वैश्व हूं प्रमांनिये।।

अंतहकरण मांहि अहंकार बुद्धि जाकै, रजोगुण बर्द्धमान क्षत्री पहिचांनिये।

सत्वगुण बुद्धि एक आत्मा बिचार जाकै, सुन्दर कहत वह ब्राहमण बषांनिये।।'(6)

दूसरी जगह संत सुन्दरदास जनमानस को कुलीन जाति होने पर गर्व न करने की सलाह भी दी है, यथा-

सुन्दरदासः

सूत्र गरे मंहि मेलि भयौ द्विज ब्राह्रण है, करि ब्रह्र न जान्यौ।

क्षत्रिय हरै करि क्षत्र धर्यौ सिर है, गय पैदल सौं मन मान्यौ।।

वैश्व भयो वपु की वय देषत, झूंठ प्रपंच वनिज्यहि ठांन्यौ।

शुद्र भयौ मिलि शूद्र शरीरहि, सुन्दर आपु नहीं पहिचांन्यौ।।'(8)

सुन्दरदास की इस धारणा को डॉ॰ रमेशचन्द्र मिश्र नए सिरे से व्याख्या करते हुए कहते हैं -"ये जातियाँ तत्कालीन रूढ़ वर्ण-व्यवस्था के विकल्प के रूप में प्रस्तुत की गई हैं। इस विवेचन में वर्तमान समाज (लोक) को देखते हुए, निहित विचार-पक्ष बहुत ही सार्थक लगता है।"(7) संत सुन्दरदास के विपरीत संत रज्जब अली ने वर्ण-व्यवस्था के प्रति विद्रोही तेवर दिखाए। यथा-

रज्जबः

'जाति कुजाति भई सम सारिखी, नांव निरंजन मैं जब आये।

तांबेर लौह को अंतरभागै जी, कंचन होत है पारस लाये।।

थार अठार ज्यूं आंबर अंकलै, चंदन संगि सुगंध कहाये।

हो रज्जब आगि मैं आगि भाये सब, काष्ठ के कुल भेद जराये।।'(9)

अपने गुरू संत दादू दयाल का अनुसरण करते हुए संत रज्जब अली और सुन्दरदास ने भी वर्ग-विहीन समाज की परिकल्पना करते हुए साम्यभावना को उचित पृष्ठभूमि प्रदान की।(10) संत रज्जब अली के अनुसार-

रज्जबः

'कौन कुलीन कौ देवल फिरयो जु, कौन कुलीन कै बारधि आई।

कौन कुलीन कौ संख बजायौ रे, कौन कुलीन कै बेर सुनवाई।।

कौन कुलीन कै गति जनेऊ हो, कौन कुलीन सु देखि कसाई।

हो रज्जब राम रचै नहिं जातिन, प्रीति प्रसंग मिलै हरि भाई।।'(11)

वहीं संत सुन्दरदास ऊँच-नीच के भेदभाव को आपसी द्वन्दों का कारण बताते है। यथा-

सुन्दरदासः

'मैं सुखिया सुख सेज सुखासन है गय भूमि महारजधानी।

हौं दुखिया दिन रैंनि भरौ दुख मोहि बिपत्ति पर नहीं छानी।।

हौं अति उत्तम जाति बडौ कुल हौं अति नीच क्रिया कुल हानी।

सुन्दर चेतनता न संभारत देह स्वरूप भयौ अभिमानी।।' (12)

दोनों ही संतों ने हिन्दू तथा मुस्लिम धर्माबलम्बियों में भावनात्मक एकता लाने का प्रयास किया और अपने गुरू सन्त दादू दयाल के उपदेशों को निभाया-

'सब हम देख्या शोध कर, दूजा नाहीं आन।सब धट एकै आतमा, क्या हिन्दू मुसलमान।।' (13)

संत रज्जब अली के अनुसार दोनों धर्म के अनुयायी एक ही तरह के पंच-तत्वों से बने है अतः दोनों हर तरह से समान हैं-

रज्जबः

'हिन्दु तुरूक दून्यूं जल बूँदा, कासूँ कहये बांभण सूदा।

रज्जब समता ग्यान बिचारा, पंच तत का सकल पसारा।।'(14)

इन्हीं विचारों को आगे बढ़ाते हुए सन्त सुन्दरदास कहते हैं कि दोनों धर्मों के लोगों का जन्म किसी भी चिन्ह से रहित हुआ है इसलिए उनको अलगाव का रास्ता त्याग कर स्वाभाविक रीति से भगवान का स्मरण करना चाहिए। यथा-

सुन्दरदासः

'हिन्दू की हदि छाड़ि कै, तजी तुरक की राह।

सुन्दर सहजै चीन्हियाँ, एकै राम अलाह।।'(15)

हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में "विशेषकर संत साहित्य में....दीर्घकाल से प्रचलित धार्मिक विश्वासों, सामाजिक और वैयक्तिक आचरणों के मान तथा विभिन्न संप्रदायों द्वारा स्वीकृत सिद्धातों पर या तो आक्रमण किया गया या उनके संबंध में सन्देह प्रकट किया गया है।"(16) दोनों संतों ने ऊँच-नीच, साम्प्रदायिकता आदि सामाजिक-धार्मिक दोषों को व्यंजित करते हुए मानव-मात्र के उपकार का मार्ग प्रशस्त किया। सन्त रज्जब जी और संत सुन्दरदास ने समकालीन समाज में व्याप्त आडम्बर-मूलक प्रवृतियों को उखाड़ देने का प्रयास किया। बाह्याचारों का खण्डन करते हुए इन संत कवियों ने किसी भी धर्म का पक्षपात नहीं किया।

संत रज्जब जी ने 'स्वांग की अंग' साखी भाग में जिन बाह्याचारों पर सहजता से आक्रमण प्रहार किया उसमें भेष-माला, तिलक, व्रत-नियम, उपवास तथा अंध-विश्वास प्रमुख हैं। यथा-

रज्जबः

'तिलक रहित दे तिलक तन, देखौ कर सु कपार।रज्जब साषित भगत कां, बेत्वा करौ विचार।।

टीका इस सारे नवै, बिण टीके कौ जाइ। रज्जब यहुं पतसाह दिस, नर देखो निरताइ।।' (17)

बाह्याचारों में लिप्त आचरणों पर व्यंग्य करते हुए संत सुन्दर दास कहते हैं-

सुन्दरदासः

'आसन मारि सँवारि जटा नख उज्जल अंग विभूति चढ़ाई।

या हमकौं कछु देइ दया करि घेरि रहै बहु लोग लुगाई।।

कोउक उत्तम भोजन ल्यावत कोउक ल्यावत पान मिठाई।

सुन्दर लै करि जात भयौ सब मूरष लोगनि या सिधि पाई।।'(18)

सुन्दरदास ने अन्य संतों की भांति तीर्थ-यात्रा आदि बाह्य क्रियाओं को मन की शुचिता के अभाव में निरर्थक बताया है-

सुन्दरदासः

'कोउक जात पिराग बनारस कोइ गया जगन्नाथहिं धावै।

को मथुरा बदरी हरिद्वार सु कोउ भया कुरषेतहि न्हावै।।
कोउक पुष्कर हरै पंच तीरथ दौरैइ दौरे जु द्वारिका आवै।
सुन्दर बित्त गड्यौ घर मांहि सु बाहिर ढूंढत क्यौं करि पावै।।'(19)
सन्त रज्जब अली अपनी रचनाओं में तीर्थ-यात्रा के विरोध में कबीर की तरह उग्र नज़र आए-

रज्जबः

'गंगा गोबिन्द चरन तज, खार समंद को जाइ।रज्जब उधमी कै उदिक, अध उतरै क्यौं न्हाइ।।

हरि सौं हुई हराम खोरि, हाड़ डलाये मांहि। रज्जब ज्यूं जानै नहीं, गाफिल गंगा जाहि।।'(20)

डॉ॰ त्रिलोकी नारायण दीक्षित के शब्दों में 'पंडों तथा तीर्थों के अन्य पुजारियों द्वारा दर्शनार्थियों का उत्पीड़न तथा व्यभिचार की अधिकता के कारण भी सुन्दरदास ने तीर्थयात्रा का विरोध किया।'(21) स्पष्ट है कि संत सुन्दरदास ने बाह्याचारों पर रज्जब अली की भांति आक्रमण प्रहार नहीं किया अपितु सहज भाव से अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की है।
नारी-निन्दा निर्गुण संत-साहित्य का एक विवादास्पद विषय रहा है। संत रज्जब अली और संत सुदंर दास के गुरू संत दादू दयाल नारी को त्यागने का उपदेश देते हैं-
'काल कनक अरू कामिनी, परिहरि इनका संग।

दादू सब जग जलि मुवा, ज्यों दीपक ज्योति पतंग।।'(22)

अपने गुरू दादू दयाल की भांति संत रज्जब अली 'विषय का अंग' भाग में नारी के भोग-प्रधान स्वरूप की निन्दा की है। उन्होंने नारी के शरीर की तुलना सेमल वृक्ष से की है जिससे आकर्षित होकर पुरूष आत्म-समर्पण कर देता है और उसके जन्म-मरण का कारण बनती है-

सुन्दरदासः

'सुन्दरि तरू से बरसही, नौ सत पहुप सरीर। रज्जब फल बरिकत रहति, तहं फूले मन कीर।।

जन रज्जब जुवती जहर, पागी सकल स्यंगार। अरोगहि अज्ञान नर, सुझै मीच न मार।।' (23)

सुन्दरदास जी ने भी 'नारी निन्दा कौ अंग' व 'अथ नारी पुरूष श्लेष कौ अंग' भागों में नारी की जी खोलकर निन्दा की है और इससे पृथक रहने का उपदेश दिया। उनके अनुसार नारी शरीर एक अपरिचित सघन जंगल की तरह है जिसके प्रभाव से पुरूष विवेकहीन हो जाता है और अपने आप को मुक्त नहीं कर पाता –

सुन्दरदासः

'कामिनी कौ देह मानौं कहिये सघन बन, उहां कोऊ जाइ सु तौ भूलि कैं परतु है।

कुंजर है गति कटि केहरि कौ भय जायें, बेनी काली नागनीऊं फन कौं धरतु है।।'(24)

संत सुंदरदास की साखियों का विवेचन करते हुए रमेशचन्द्र मिश्र कहते हैं-"संत वाणी पर नारी-निन्दा संबंधी आक्षेप भी तिरस्कृत जान पड़ता है क्योंकि रचनाकार ने नारी-पुरूष सहयोग पर विशेष बल दिया है।" (25) यथा-

सुन्दरदासः

'सुन्दर नारी पुरूष की प्रीति परस्पर जानि। तब तैं संग तज्यौ नहीं जबतैं पकरी पानि ।।

सुन्दर नारी पतिव्रता तजै न पिय को संग। जीव चलै सह गामिनी तुरत करै तन भंग।।' (26)

संत रज्जब और संत सुन्दरदास ने नारी के कामिनी रूप की अपनी रचनाओं में विरोध किया है, परन्तु उन्होंने नारी के कल्याणकारी रूप की भी प्रशंसा की है। संत रज्जब जहाँ एक ओर नारी को माता के रूप में देखने के पक्षधर थे, तो दूसरी ओर नारी को पतिव्रत रूप में बाँधते नजर आए। यथा-

रज्जबः

'रज्जब रमिता राम तजि, जाइ कहां किस ठौर।

सकल लोक एकहि धणी, नहिं साहिब कोई और ।।

रज्जब राजी एक सं, दूजा दिल न समाइ।

देखौ देही एक मैं, द्वै जिव रहैं न आइ।।' (27)

उसी तरह संत सुन्दर दास ने परिवार-मर्यादा के माध्यम से नारी को पर-पुरूष सम्पर्क से सावधान रहने पर जोर दिया-

सुन्दरदासः

'नारी घर बैठी रहेै पर घर करै न गौंन। सुन्दर पावै पीव सुख दोष लगावै कौन।।

नारी प्यारी पीव कौं सुन्दर आणै माय। जब नारी असकी परै तब षरचै बहु दाय।।'(28)

ऐसा प्रतीत होता है दोनों संत कवियों ने मध्यकालीन युगीन नारी की दयनीय स्थिति को ही निरूपित किया है। उनके उपदेशों में नारी को चहारदीवारी के भीतर नजरबन्द करने की कोशिश की है। यह विचारणीय विषय है कि समीक्षकों ने संत कवियों द्वारा की गई 'नारी निन्दा' को 'काम निन्दा' कहकर उनके प्रति आक्षेप को हल्का कर दिया गया है।(29)

डॉ॰ धर्मपाल मैनी के अनुसार नए समाज के निर्माण में संतों ने मानवीय मूल्यों को महत्वपूर्ण समझा जिसमें 'मानव-मानव की समता', कर्म का महत्व', 'गृहस्थ जीवन का महत्व', 'वैयक्तिक सात्त्विक कर्म द्वारा आजीविका अर्जन, 'सहजभाव-भक्ति', वैयक्तिक मूल्य-विनयता और मधुरता' और 'कथनी और करनी' महत्त्वपूर्ण है। (30) अन्य निर्गुण संतों की तरह संत रज्जब जी और संत सुंदरदास ने भी मानवीय मूल्यों को सामाजिक चेतना में प्रतिपादित किया। (31) संत सुन्दरदास गृहस्थ जीवन में मानवीय मूल्यों को अपनाने पर जोर देते हैं। उन्होंने वास्तविक साधना भूमि के रूप में गृहस्थ जीवन को सर्वोत्तम माना है। (5) मानव मूल्यों को ग्रहण करने के लिए रज्जब जी ने संयम, वैराग्य, प्रभु नाम स्मरण और संगति को ग्रहण करने की प्रेरणा दी जिसके प्रभाव से जीवन में प्रेम, करूणा, दया, संतोष, ज्ञान और शीलता जैसे मूल्यों की प्राप्ति होती है।(32) संत रज्जब अली के अनुसार कथनी-करनी का सांमजस्य ही सफल जीवन की कुंजी है जिसके अभाव में मनुष्य दर-दर की ठोकरें ही खाता है-

रज्जबः

‘करणी सौ काठै रह्या, कथणी कौ हुसियार।

रज्जब रामहिं क्यूं मिलै, सकल बक्या बिभिचार।।’(33)

इस प्रकार संत रज्जब अली और संत सुन्दर दास जी ने अपने अपनी वाणियों के माध्यम से मध्यकालीन सामाजिक चेतना को सशक्त किया जिससे सामाजिक स्तर पर जन-जीवन का उद्धार हुआ। यह भी विवादित विषय रहा है कि संत काव्य सामाजिक परिवर्तन में अपनी भूमिका का पूर्ण निर्वाह नहीं कर पाए जिसका दोष समाज की नियंत्रक शक्तियों को दिया गया जो साहित्य से कहीं अधिक प्रभावी साबित हुई।(34) जहाँ तक संत रज्जब जी और संत सुन्दरदास जी की सामाजिक चेतना की तुलना का प्रश्न है, संत रज्जब अली सामाजिक चेतना के आधारों में अधिक उग्र और आक्रमक नजर आए जबकि संत सुन्दरदास शास्त्रीय सम्मत होते हुए भी कम ऊर्जावान नजर आए।(35) इसका एक कारण उनका पोथी ज्ञान भी था जिसके कारण उनकी वाणी निर्गुण संतों की अपेक्षा सामाजिक पक्षों में नियंत्रित थी। अपने सामाजिक आदर्शों को फली भूत करने के लिए जो ज्योति दोनों संतों ने जलाई, वह युगों तक हिन्दी साहित्य को अक्षुण्ण रखेगी।

संदर्भ सूचीः-

1. सम्पादक कालिका प्रसादः बृहत् हिन्दी कोश, पृ॰ 384.
2. डॉ॰ पी.के. राधामणिः भक्ति आन्दोलन और सामाजिक जागरण, मध्ययुगीन हिन्दी-भक्ति साहित्य का सामाजिक पक्ष, सार्थक प्रकाशन, नई दिल्ली (2002), पृ॰ 117.
3. रमेशचन्द्र मिश्रः सुन्दर ग्रन्थावली, प्रथम भाग, किताबघर, नई दिल्ली (1992), पृ॰ 30.
4. डॉ॰ ब्रजलाल वर्माः रज्जब बानी, महात्मा रज्जब का परिचय, उपमा प्रकाशन, प्राइवेट लिमिटेड कानपुर (1963), पृ॰ 11.
5. डॉ॰ कृष्णकुमार कौशिकः सन्त कवि सुन्दर दास और उनका काव्य, साहित्य मंदिर, दिल्ली (1995) पृ॰ 120-124.
6. रमेशचन्द्र मिश्रः सुन्दर ग्रन्थावली, द्वितीय भाग, बिचार कौ अंग (26/12), किताबघर, नई दिल्ली (1992), पृ॰ 900.
7. ---वही ---
8. रमेशचन्द्र मिश्रः सुन्दर ग्रन्थावली, द्वितीय भाग, स्वरूप बिस्मरण कौ अंग (24/20), किताबघर, नई दिल्ली (1992), पृ॰ 874.
9. डॉ॰ ब्रज लाल वर्माः रज्जब बानी, सवैया भाग, समिता निदान का अंग (4), उपमा प्रकाशन, प्राइवेट लिमिटेड कानपुर (1963), पृ॰ 440.
10. डॉ॰ विमल मेहताः निर्गुण कवियों के सामाजिक आदर्श, सामाजिक आदर्श और वैयक्तिक विकार, आशा प्रकाशन गृह, नई दिल्ली (1979), पृ॰ 204-212.

11. डॉ॰ ब्रज लाल वर्माः रज्जब बानी, सवैया भाग, समिता निदान का अंग (7), उपमा प्रकाशन, प्राइवेट लिमिटेड कानपुर (1963), पृ॰ 441.
12. रमेशचन्द्र मिश्रः सुन्दर ग्रन्थावली, द्वितीय भाग, स्वरूप बिस्मरण कौ अंग (24/24), किताबघर, नई दिल्ली (1992), पृ॰ 876.
13. श्री नारायण दास स्वामीः श्री दादूवाणी, कस्तूरिया मृग का अंग(साखी 8), श्री दादू महाविद्यालय व छात्रावास संचालन समिति, जयपुर (2020).
14. सं॰ वियोगी हरिः सन्त सुधासार, खण्ड-1, सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, पृ॰ 530.
15. ---वही ---, पृ॰ 597.
16. हजारी प्रसाद द्विवेदीः कबीर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली (2000), पृ॰ 223.
17. डॉ॰ बृज लाल वर्माः रज्जब बानी, साखी भाग, स्वांग का अंग (9-10), उपमा प्रकाशन, प्राइवेट लिमिटेड कानपुर (1963), पृ॰ 288.
18. रमेशचन्द्र मिश्रः सुन्दर सवैया ग्रन्थ, चाणक कौ अंग (9), जगतराम एण्ड सन्स, दिल्ली (1993), पृ॰ 99.
19. ----- वही -----(15), पृ॰ 101.
20. डॉ॰ बृज लाल वर्माः रज्जब बानी, साखी भाग, तीरथ तरस्कार का अंग (15-16), उपमा प्रकाशन, प्राइवेट लिमिटेड कानपुर (1963), पृ॰ 299.
21. डॉ॰ त्रिलोकी नारायण दीक्षितः सुन्दर दर्शन, किताब महल, दिल्ली (1953), पृ॰ 20.
22. सं॰ स्वामी मंगल दासः दादू की बानी, भाग 1, जयपुर (1951), पृ॰ 123.
23. डॉ॰ बृज लाल वर्माः रज्जब बानी, साखी भाग, विषय का अंग (23-24), उपमा प्रकाशन, प्राइवेट लिमिटेड कानपुर (1963), पृ॰ 329.
24. रमेशचन्द्र मिश्रः सुन्दर ग्रंथावली, द्वितीय भाग, अथ नारी निंदा कौ अंग (9/1), किताबघर, नई दिल्ली (1992), पृ॰ 753.
25. ---वही---, प्रथम भाग, नारी पुरूष श्लेष कौ अंग (8), पृ॰ 389.
26. ----वही --- (8/23-24), पृ॰ 392-393.
27. डॉ॰ बृज लाल वर्माः रज्जब बानी, साखी भाग, पतिव्रता का अंग (6-7), उपमा प्रकाशन, प्राइवेट लिमिटेड कानपुर (1963), पृ॰ 144.
28. रमेश चन्द्र मिश्रः सुन्दर ग्रंथावली, प्रथम भाग, अथ नारी पुरूष श्लेष कौ अंग(8/7-8), किताबघर, नई दिल्ली (1992), पृ॰ 390.

29. डॉ॰ विमल मेहताः निर्गुण कवियों के सामाजिक आदर्श, निर्गुण कवियों के आदर्श समाज का स्वरूप, नारी-निन्दा, आशा प्रकाशन गृह, नई दिल्ली (1979), पृ॰ 199-204.
30. सं॰ डॉ॰ वसुमती शर्मा तथा कमल किशोर सांखलाः राजस्थान का सन्त-साहित्य, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर (2002), पृ॰ 317-321.
31. रवीन्द्र कुमार सिंहः सन्त काव्य की सामाजिक प्रांसगिकता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली (1994), पृ॰ 126-130.
32. डॉ॰ कुलभूषण शर्माः सन्त रज्जब अली के काव्य में मानव मूल्य, गौरव बुक्स, दिल्ली (2011), पृ॰ 92-93.
33. डॉ॰ बृज लाल वर्माः रज्जब बानी, साखी भाग, सांच चाणक का अंग (45), उपमा प्रकाशन, प्राइवेट लिमिटेड कानपुर (1963), पृ॰ 258.
34. प्रेमशंकरः भक्ति काव्य का समाज दर्शन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली (2007), पृ॰ 212-234.
35. डॉ॰ जगदम्बा प्रसाद श्रीवास्तवः संत रज्जब एवं सुन्दरदास, परिमल प्रकाशन (2007), पृ॰ 182-190.